॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

पंचामृत

[जन्म-मरणसे मुक्त करनेवाली पाँच बातें]

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

'हे प्रभो! आप ही मेरी माता हो, आप ही पिता हो, आप ही बन्धु हो, आप ही सखा हो, आप ही विद्या हो, आप ही धन हो। हे देवदेव! मेरे सब कुछ आप ही हो।'

संकलन तथा सम्पादन—
राजेन्द्र कुमार धवन

गीता प्रकाशन,
कार्यालय—माया बाजार, पश्चिमी फाटक,
गोरखपुर—273005 (उ०प्र०)
फोन—09389593845; 07668312429
e-mail: radhagovind10@gmail.com

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

पंचामृत

[जन्म-मरणसे मुक्त करनेवाली पाँच बातें]

१) हम भगवान्‌के ही हैं।
२) हम जहाँ भी रहते हैं, भगवान्‌के ही दरबारमें रहते हैं।
३) हम जो भी शुभ काम करते हैं, भगवान्‌का ही काम करते हैं।
४) शुद्ध-सात्त्विक जो भी पाते हैं, भगवान्‌का ही प्रसाद पाते हैं।
५) भगवान्‌के दिये प्रसादसे भगवान्‌के ही जनोंकी सेवा करते हैं।

—यह 'पंचामृत' है। इसकी पहली बात है—'**हम भगवान्‌के ही हैं।**' आप कृपा करके कम-से-कम इतनी बात मान लो कि हम भगवान्‌के हैं। भगवान्‌ने कहा है कि जीव मेरा ही अंश है—'**ममैवांशो जीवलोके**' (गीता १५। ७)। '**मम एव अंशः**' 'मेरा ही अंश' कहनेका तात्पर्य है कि जैसे शरीर माता और पिता दोनोंका अंश है, ऐसे यह जीव दोका अंश नहीं है, प्रत्युत केवल भगवान्‌का ही अंश है। इसमें प्रकृतिका मिश्रण नहीं है। आप शरीरको अपना मानते हो, पर वास्तवमें शरीर अपना नहीं है। अगर शरीर अपना है तो क्या शरीरपर आपका अधिकार है? शरीरको जैसा चाहो, वैसा बना सकते हैं? जितने दिन चाहें, उतने दिन रख सकते हैं? जैसा रखना चाहें, वैसा रख सकते है? क्या सदा नीरोगी रख सकते हैं? सदा बलवान् रख सकते हैं? उसको मरनेसे रोक सकते हैं? आपका इसपर क्या स्वतन्त्र अधिकार है? भूख-प्यास भी नहीं सह सकते! उस शरीरकी आप सदा गुलामी-ही-गुलामी करते हैं! आप विचार करें। **शरीर प्रकृतिका अंश है, इसलिये वह कभी प्रकृतिको नहीं छोड़ता, पर आप भगवान्‌के अंश होते हुए भी भगवान्‌को छोड़ देते हो!!**

जिस शरीरपर हमारा वश नहीं चलता, उसको अपना कहना उचित है क्या? एक दरवाजा निकालनेका हुक्म दे नहीं सकता और कहूँ कि मैं कानपुरका राजा हूँ तो लोग पागल कहेंगे! आप शरीरको मेरा कहते हो तो क्या शरीरपर आपका हक लगता है? केश-जितना भी हक नहीं लगता। शरीर मेरा है—यह केवल आपका अभिमान है। मूर्खताके सिवाय और कुछ नहीं है! इसलिये 'पंचामृत' की सबसे पहली बात है कि हम भगवान्‌के ही हैं। ये शरीर, इन्द्रियाँ, मन, बुद्धि आदि सब भगवान्‌के दिये हुए हैं।

दूसरी बात है—'**हम जहाँ भी रहते हैं, भगवान्‌के ही दरबारमें रहते हैं।**' जिसको आप अपना घर समझते हो, वह क्या वास्तवमें आपका घर है? उसमें क्या आपकी स्वतन्त्रता है कि हम यहीं रहेंगे? उस घरमें सदा रहना क्या आपके हाथमें है? आप भगवान्‌के हो तो आपके रहनेका घर भी भगवान्‌का है, आपका नहीं है। भगवान्‌की मरजीसे ही उस घरमें रहते हो। उस घरको अपना मानना गलती है।

महाभारतमें यक्ष-युधिष्ठिरका संवाद आता है। यक्षने पूछा कि वार्ता (बात) क्या है? तो युधिष्ठिरने उत्तर दिया—

अस्मिन् महामोहमये कटाहे सूर्याग्निना रात्रिदिवेन्धनेन।

मासर्तुदर्वीपरिघट्टनेन भूतानि कालः पचतीति वार्ता॥

(महाभारत, वन० ३१३। ११८)

'इस महामोहरूपी कड़ाहेमें भगवान् काल समस्त प्राणियोंको मास और ऋतुरूप करछीसे उलट-पलटकर सूर्यरूप अग्नि और रात-दिनरूप ईंधनके द्वारा राँध रहे हैं, यही वार्ता है।'

मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष-लता आदि जितने भी प्राणी हैं, वे सब महामोहरूपी कड़ाहमें पड़े हुए हैं। सूर्य, अग्नि और रात-दिन ईंधन है। महीना आदि उनको चलानेवाली करछी है, जिससे किसीको यहाँ फेंक दिया, किसीको वहाँ फेंक दिया। उसमें काल महाराज सबको पका रहे हैं। जैसे चावल छोटे-छोटे होते हैं, पर पककर बड़े बन जाते हैं, ऐसे ही छोटे-छोटे बच्चे बड़े बन जाते हैं तो काल उनका भोजन कर लेता है। इस प्रकार काल सबको पका रहा है और भोजन कर रहा है।

यक्षने पूछा कि आश्चर्य क्या है? तो युधिष्ठिरने उत्तर दिया—

अहन्यहनि भूतानि गच्छन्तीह यमालयम्।
शेषाः स्थावरमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम्॥

(महाभारत, वन० ३१३। ११६)

'संसारमें प्रतिदिन ही जीव यमलोकको जा रहे हैं, फिर भी बचे हुए लोग यहाँ सदा जीते रहनेकी इच्छा करते हैं। इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा?'

रात-दिन प्राणी मौतमें जा रहे हैं, फिर भी मनुष्य रहनेके लिये मकान बना रहा है कि बीचमें सीमेण्ट, सरिया देकर खूब पक्का, बढ़िया मकान बनाओ कि पीढ़ियोंतक बना रहे, पर बीचमें 'राम नाम सत्य' हो जाता है! वह सोचता नहीं कि मेरे मरनेसे ही तो पीढ़ियाँ चलेंगी! तू जीता रहेगा क्या? सब दौड़े जा रहे हैं। एक क्षण भी ठहरनेवाला कोई नहीं है, फिर भी लोग यहाँ सदा रहना चाहते हैं! इससे बढ़कर आश्चर्य और क्या होगा!

तीसरी बात है—'**हम जो भी शुभ काम करते हैं, भगवान्‌का ही काम करते हैं।**' आप जो भी काम करते हो, वह करते रहो, पर मनसे उसको अपना मत मानो। भीतरसे यह मानो कि हम भगवान्‌का ही काम करते हैं। निहाल हो जाओगे! बड़ी सीधी-सरल बात है! न जप करना है, न तप करना है, न ध्यान करना है, बस, जो कुछ करते हो, भगवान्‌का काम समझकर करो। काम-धंधा भगवान्‌का करेंगे तो फिर झूठ-कपट क्यों करेंगे? झूठ-कपटसे भगवान्‌का काम नहीं होता। भगवान्‌का काम सच्चाईसे होता है। अब चाहे व्यापार करो, चाहे गायोंकी सेवा करो, चाहे घरका काम करो, चाहे छोरा-छोरीका ब्याह करो, सब काम भगवान्‌का समझकर करो।

चौथी बात है—'**शुद्ध-सात्त्विक जो भी पाते हैं, भगवान्‌का ही प्रसाद पाते हैं।**' भगवान्‌के प्रसादका बड़ा भारी माहात्म्य है! प्रसाद पानेसे सब दुःख मिट जाते हैं—'**प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते**' (गीता २। ६५)। ठाकुरजीका प्रसाद पानेके लिये लखपति-करोड़पति भी हाथ पसारते हैं! प्रसादका छोटा-सा कण पाकर भी वे बड़े प्रसन्न हो जाते हैं! अगर प्रसादकी जगह उनको पाँच-दस रुपयेकी मिठाई दे दें तो वे नाराज हो जायँगे! आप घरमें जो बनाते हैं, वह सब भगवान्‌का ही प्रसाद है। अगर आप मान लो तो कितने आनन्दकी बात है!

मेरे मनमें तो ऐसी बात आती है कि घरमें जितनी भी वस्तुएँ हैं, उन सबपर तुलसीदल रख दो। रुपयोंपर, गहनोंपर, कपड़ोंपर, गेहूँपर, बाजरेपर, चावलोंपर, सब चीजोंपर तुलसीदल रखकर भगवान्‌के अर्पण कर दो कि महाराज! ये सब आपकी ही चीजें हैं। अब घरमें भोजन बनेगा तो भगवान्‌का

प्रसाद ही बनेगा। घरपर भी तुलसीदल रख दो! छोरा-छोरीपर भी रख दो! स्त्रीपर भी रख दो! अपनेपर भी रख दो! सब भगवान्‌के अर्पण कर दो!

पाँचवीं बात है—'**भगवान्‌के दिये प्रसादसे भगवान्‌के ही जनोंकी सेवा करते हैं।**' दूकान आदिमें काम करते हैं तो भगवान्‌का ही काम करते हैं, और उससे जो पैसा पैदा होता है, वह भगवान्‌का ही प्रसाद है। उस प्रसादसे भगवान्‌के ही जनोंका अर्थात् माँ-बाप, स्त्री-पुत्र आदिका पालन करते हैं, उनकी सेवा करते हैं। छोटे-बड़े, बालक-जवान-बूढ़े सब-के-सब भगवान्‌के ही जन हैं।

उपर्युक्त पाँच बातें 'पंचामृत' हैं, पाँच अमृत हैं! इनको लिखकर अथवा छपा हुआ पन्ना लेकर घरमें टाँग दो और रोजाना सुबह-शाम पढ़ो। इन बातोंको आप हृदयमें धारण कर लो। इसमें आपका क्या नुकसान होता है? **इसके लिये आपको न कहीं जाना है, न जंगलमें रहना है, न साधु-बाबा बनना है, प्रत्युत जहाँ रहते हैं, वहाँ रहते हुए ही केवल भाव बदलना है। भाव बदलनेसे जीवन बदल जायगा।** जैसे, आपकी कन्या जबतक कुआँरी रहती है, तबतक माँ-बापको बड़ी चिन्ता रहती है। पर जब अच्छा घर-वर मिल जाता है, आप कन्यादान कर देते हो, तब वही कन्या आपके पास बैठी हो तो भी आपको चिन्ता नहीं होती; क्योंकि अब आप उसको अपनी नहीं मानते। अब वह ससुरालकी हो गयी। इस तरह आप कृपा करके अपने-आपको भगवान्‌को दे दो। चुपचाप भीतरसे स्वीकार कर लो कि हम भगवान्‌के हैं। किसीको कहनेकी जरूरत नहीं। लोगोंमें डुग्गी पिटानेकी जरूरत नहीं। अब कोई मर जाय तो भगवान्‌का मर गया! घाटा लग गया तो भगवान्‌का लग गया! मुनाफा हुआ तो भगवान्‌का हो गया! बहुत धन आ गया तो भगवान्‌के आ गया! धन चला गया तो भगवान्‌का चला गया! हमारा घाटा-नुकसान होता ही नहीं! सब कुछ भगवान्‌का है तो फिर किस बातकी चिन्ता? सदाके लिये मौज हो जायगी, आनन्द हो जायगा!!

चिन्ता दीनदयाल को, मो मन सदा अनन्द।
जायो सो प्रतिपालसी, रामदास गोबिन्द॥
जो जाको शरणो गहै, ताकहँ ताकी लाज।
उलटे जल मछली चलै, बह्यो जात गजराज॥

एक भगवद्भक्त सेठ था। उसका दर्शन करनेके लिये एक सन्त गये। लोगोंसे पता पूछा तो उन्होंने कहा कि वह जो आदमी खड़ा है, वह सेठ है और वह उसका मकान है। सन्त उसके पास गये और उसको नमस्कार किया। उसने भी सन्तको नमस्कार किया। सन्तने पूछा कि यह मकान आपका है क्या? सेठ बोला कि नहीं, यह ठाकुरजीका है महाराज! यह मोटर-गाड़ी किसकी है? यह ठाकुरजीकी है। ये गायें किसकी हैं? भगवान्‌की हैं। ये बाल-बच्चे खेल रहे हैं, किसके हैं? भगवान्‌के हैं। यह स्त्री किसकी है? भगवान्‌की है। ऊपर चढ़कर मन्दिर देखा तो पूछा कि यह मन्दिर किसका है? यह ठाकुरजीका मन्दिर है। उसमें सोने-चाँदीके कई बर्तन देखे तो पूछा कि ये बर्तन किसके हैं? ये भगवान्‌के हैं। ठाकुरजीका विग्रह देखा तो पूछा कि ये किसके हैं? सेठ बोला— ये मेरे हैं!! सब कुछ ठाकुरजीका है और ठाकुरजी मेरे हैं तो ठाकुरजीकी सब चीजें मेरी ही तो हुईं! पर सबके बीचमें ठाकुरजी हैं! इसलिये विष नहीं चढ़ेगा, अभिमान नहीं होगा कि हमारी चीजें हैं! यही भाव मीराबाईका था—'***मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई***'। जैसे मीराबाईने अपने-आपको भगवान्‌को सौंप दिया और केवल भगवान्‌को अपना माना, अन्य किसीको अपना माना ही नहीं, ऐसे ही आप भी केवल भगवान्‌को अपना मान लो।

हम भगवान्‌के ही हैं, भगवान्‌के ही दरबारमें रहते हैं, भगवान्‌का ही काम करते हैं, भगवान्‌का ही प्रसाद पाते हैं और भगवान्‌के दिये प्रसादसे भगवान्‌के ही जनोंकी सेवा करते हैं—इस 'पंचामृत' का सेवन करनेसे आपका जीवन महान् पवित्र हो जायगा! आप गुप्त रीतिसे सन्त-महात्मा बन जायँगे! आप परमात्माको प्राप्त हो जायँगे! आपको तत्त्वज्ञान हो जायगा! आप जीवन्मुक्त हो जायँगे! आप भगवान्‌के प्यारे भक्त हो जायँगे!

[दिनांक १७.४.१९९९ को प्रातः ९ बजे कानपुरमें दिया गया प्रवचन]

*** *** ***

आप जहाँ रहते हैं, वहाँ अपने घरमें रहते हैं। परन्तु अपने घरमें रहनेका माहात्म्य नहीं है। अगर आप भगवान्‌के घरमें रहें तो इसका बड़ा भारी माहात्म्य है! जिस घरको आपने अपना मान रखा है, वह वास्तवमें पहलेसे भगवान्‌का ही था, अब भी भगवान्‌का ही है और आगे भी भगवान्‌का ही रहेगा, फिर बीचमें आपका कैसे हो गया? आप मरोगे तो यह घर आपके साथ थोड़े ही चलेगा? यह तो भगवान्‌का ही है। अतः आजसे आप मान लो कि हम भगवान्‌के घरमें रहते हैं। आप वृन्दावन आते हैं तो कहते हैं कि हम भगवान्‌की लीलाभूमिमें हैं! अयोध्या आते हैं तो कहते हैं कि हम भगवान्‌के दरबारमें आ गये! अगर आप अपने घरको भगवान्‌का मान लो तो वही घर वृन्दावन अथवा अयोध्या हो गया! आपके भीतर हरदम यही बात रहे कि हम तो भगवान्‌के घरमें ही रहते हैं! आजसे ही यह बात मान लो। अपने-अपने घरोंको अपना घर मत मानो, प्रत्युत भगवान्‌का ही घर मानो।

एक बातपर और ध्यान देना। जो भी काम करो, भगवान्‌का मानकर करो। चाहे खेती करो, चाहे घरका काम-धंधा करो, चाहे भोजन करो, चाहे भजन करो, चाहे कपड़ा धोओ, चाहे स्नान करो, सब भगवान्‌का काम मानकर करो। शरीर भी भगवान्‌का है, इसलिये खाना-पीना भी भगवान्‌का काम है। सब संसारके मालिक भगवान् हैं तो सब शरीरोंके मालिक भी भगवान् हैं। फिर शरीरोंका और संसारका काम किसका हुआ? भगवान्‌का ही तो हुआ! कैसी मौजकी बात है!

घरमें जितनी चीजें हैं, वे भी भगवान्‌की ही हैं। घर भगवान्‌का और आप भी भगवान्‌के तो फिर चीजें किसी दूसरेकी हो सकती हैं क्या? इसलिये माताओं और बहनोंको चाहिये कि उन भगवान्‌की चीजोंको लेकर रसोई बनायें। मनमें समझें कि ओहो, मैं तो ठाकुरजीको भोग लगानेके लिये प्रसाद बना रही हूँ! प्रसाद बनाकर ठाकुजीको भोग लगायें और भोग लगाकर घरके जितने लोग हैं, उनको ठाकुरजीके ही जन (पाहुने) समझकर प्रसाद जिमायें। ऐसा मानें कि ये सब ठाकुरजीके प्यारे जन हैं, ठाकुरजीके प्यारे लाड़ले हैं, इनको भोजन करा रही हूँ! जैसे किसी बच्चेको प्यार करें तो उसकी माँ राजी हो जाती है, ऐसे ही भगवान्‌के बालकोंकी सेवा करें तो भगवान् राजी हो जायँगे। कैसी मौजकी बात है! भगवान्‌की रसोई बनायी, भगवान्‌को ही भोग लगाया और भगवान्‌के ही बालकोंको वह भोग, प्रसाद जिमा दिया। अपने भी भोजन करें तो ठाकुरजीका प्रसाद समझते हुए भोजन करें।

तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं। प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं॥

(मानस, अयोध्या० १२९। १)

केवल भोजन ही नहीं, कपड़े-गहने भी पहनें तो ठाकुरजीके अर्पण करके पहनें। सब चीजें प्रसादरूपमें ग्रहण करें तो सब चीजें पवित्र हो जायँगी। मन्दिरोंमें आपने देखा होगा कि ठाकुरजीके प्रसाद लगायें और वह बाँटें तो हरेक आदमी हाथ पसारेगा। प्रसादका छोटे-से-छोटा कण भी दो तो वह राजी

हो जायगा। चाहे लखपति हो, चाहे करोड़पति हो, आपके सामने हाथ पसारेगा और आप प्रसादका छोटा-सा कण दे दें तो वह राजी हो जायगा। वह क्या मीठेका भूखा है? अगर उसे आप कहें कि चलो बाजारमें आपको मीठाई दिलाऊँ तो वह नाराज हो जायगा! वह धनी आदमी कहेगा कि मिठाईका भूखा हूँ क्या मैं? हमें तो प्रसाद चाहिये। प्रसादका कितना महत्त्व है!!

आपको एक बहुत बढ़िया बात बतायें! आप कृपा करके कर लें तो बहुत फायदेकी बात है! घरमें जितने रुपये-पैसे पड़े हैं, गहने-कपड़े पड़े हैं, उन सबपर तुलसीदल रखकर भगवान्‌के अर्पण कर दो। घरपर भी तुलसीदल रख दो। जितने भी गाय, भेड़, बकरी हैं, उनपर भी तुलसीदल रख दो। छोरा-छोरीपर भी तुलसीदल रख दो। किनके बालक हैं? ठाकुरजीके बालक हैं!

एक चमत्कारकी बात है! पर आप हृदयसे करो, तब होगा। छोरा उद्दण्ड है और कहना नहीं मानता तो आप सच्चे हृदयसे अपनी ममता उठा लो कि यह मेरा है ही नहीं, प्रत्युत ठाकुरजीका ही है। छोरा बिल्कुल सुधर जायगा! जैसे ठाकुरजीको अर्पण करनेसे सब चीजें पवित्र, शुद्ध हो जाती हैं, ऐसे ही सच्चे हृदयसे अपनी ममता बिल्कुल मिटाकर अपने छोरेको केवल ठाकुरजीका ही मान लो तो वह पवित्र, शुद्ध हो जायगा। जैसे मुसलमानोंका छोरा है, ऐसा ही यह छोरा है। हमारा छोरा नहीं है। मर जाय तो कोई असर नहीं हमारेपर। मरा तो ठाकुरजीका छोरा मरा, जबकि ठाकुरजीका छोरा कभी मरता ही नहीं। यहाँ मर गया तो वहाँ जन्म गया! ठाकुरजीसे बाहर होता ही नहीं!

ममता ही मलिनता है। ममताके कारण ही वस्तु मलिन होती है। दान-पुण्य करते हैं तो उसके साथ अपना कोई सम्बन्ध नहीं मानें।

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम्॥

(गीता १७। २०)

'दान देना कर्तव्य है—ऐसे भावसे जो दान देश तथा काल और पात्रके प्राप्त होनेपर अनुपकारीको अर्थात् निष्कामभावसे दिया जाता है, वह दान सात्त्विक कहा गया है।'

'**अनुपकारिणे**' पदका अर्थ यह नहीं है कि जिसने हमारा उपकार किया है, उसको न दे। इसका अर्थ है कि जिसने पहले हमारा उपकार किया ही नहीं और आगे भी उपकारकी आशा नहीं है, ऐसेको दिया जाय। तात्पर्य यह हुआ कि जिनसे अपना स्वार्थका सम्बन्ध न हो, उनको दो। चाहे तो जहाँ अपनापन न हो, वहाँ सेवा करो अथवा जहाँ सेवा करो, वहाँ अपनापन मिटा दो। एक ही बात होगी।

हम भगवान्‌के हैं, भगवान्‌के दरबारमें रहते हैं, भगवान्‌का ही काम करते हैं, भगवान्‌का ही प्रसाद पाते हैं और भगवान्‌के प्रसादसे भगवान्‌के जनोंकी सेवा करते हैं—यह असली 'पंचामृत' है। आजसे इस बातको पकड़ लें। '**सर्वभावेन मां भजति**'—सब भावोंसे भगवान्‌का ही भजन करें—'**स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत**' (गीता १५। १९)। नामजप भी भजन है, कीर्तन भी भजन है, पाठ भी भजन है, सुनना-कहना सब भजन है। और तो क्या, उठना-बैठना, खाना-पीना, सोना-जगना आदि सब भगवान्‌का ही काम समझकर करें तो वह सब भजन हो जायगा। कोई भी काम करें तो यह भाव रखें कि ठाकुरजीका शरीर है, इसलिये ठाकुरजीका ही काम करता हूँ। ठाकुरजीपर एहसान नहीं करता हूँ!

भगवान् सबका भरण-पोषण करते हैं, सबका पालन करते हैं तो भगवान्‌के भक्तोंको दुःख होता ही नहीं। वे हरदम मौजमें रहते हैं। इतने मस्त रहते हैं कि उनके संगसे मस्ती आ जाती है! ठाकुरजीको

याद करनेसे बन्धन टूट जाय! नाम लेनेसे, याद करनेसे, लीला सुननेसे पाप नष्ट हो जायँ! इतने महान् पवित्र!! **'पवित्राणां पवित्रं यः'** (विष्णुसहस्रनाम १०)।

मूलमें एक छोटी-सी बात है कि मैं भगवान्‌का हूँ, बस, और किसीका नहीं हूँ। सेवा करनेके लिये संसारका हूँ; परन्तु अपना मतलब निकालनेके लिये किसीका नहीं हूँ। अपनेको केवल भगवान्‌का मान लो तो घर भगवान्‌का, परिवार भगवान्‌का, सम्पत्ति भगवान्‌की, काम भगवान्‌का, प्रसाद भगवान्‌का, सब कुछ भगवान्‌का हो जायगा। यह एकदम सच्ची बात है।

आपको बिल्कुल अनुभवकी बात बतायें। जिस बालकको माँने अपना माना है, वह छोरा दौड़कर गोदमें चढ़ जाय तो माँ हँसती है, पीछेसे पीठपर चढ़ जाय तो माँ हँसती है और जानकर ऊँ-ऊँ-ऊँ करके रोने लगे तो माँ हँसती है कि देखो, ठगाई करता है मेरेसे! छोरेकी वह कौन-सी क्रिया है, जिससे माँको प्रसन्नता नहीं होती? वह बालक जो करता है, माँ उससे राजी होती है। कारण क्या है? उसने मान लिया कि छोरा मेरा है। ऐसे ही हम भगवान्‌के होकर जो भी करें, हमारी हर क्रिया भगवान्‌का भजन हो जायगी। भजन क्या? भगवान्‌की प्रसन्नता! कुछ भी करो, भगवान् प्रसन्न होते हैं कि मेरा बच्चा खेल रहा है! कैसी मस्ती है!!

बात एक ही है—भगवान्‌का हो जाना। सच्ची बात है। आपसे पूछा जाय कि आपने इस घरमें जानकर जन्म लिया है क्या? जीते हो तो जानकर जीते हो क्या? जानकर जीयें तो मरे कौन भाई? कोई मरे ही नहीं। स्वस्थ शरीरमें रहते हो तो जानकर रहते हो क्या? अगर जानकर रहते हो तो बीमार मत पड़ो। शरीरमें जो बल-बुद्धि है, वह जानकर प्राप्त की है क्या? अगर जानकर प्राप्त की है तो बूढ़े मत होओ, पराधीन मत होओ। परन्तु यह हमारे हाथकी बात नहीं है। केवल अपना अभिमान है, और कुछ नहीं। इसलिये वास्तवमें हम ठाकुरजीके हैं, ठाकुरजीके अधीन हैं।

हनुमान्‌जीने कितना काम किया! रामजी लंकामें गये तो पुल बनवाकर पार पहुँचे; परन्तु हनुमान्‌जी कूदकर लंका चले गये! तो हनुमान्‌जीमें बल किसका है? बल वास्तवमें ठाकुरजीका ही है—

बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवनतनय बल भारी॥

(मानस, सुन्दर० १। ३)

प्रबिसि नगर कीजै सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥

(मानस, सुन्दर० ५। १)

वाल्मीकिरामायणमें आता है कि हनुमान्‌जीने ऐसी गर्जना की कि हजार रावण भी आ जायँ तो मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते; क्योंकि मैं रामजीका दास हूँ—**'दासोऽहं कोसलेन्द्रस्य'** (वाल्मीकि० सुन्दर० ४२। ३४)।

जिनके पास अपना करके कुछ नहीं है, न मन अपना है, न बुद्धि अपनी है, न शरीर अपना है, न प्राण अपने हैं, न इन्द्रियाँ अपनी हैं, न घर अपना है, न सम्पत्ति अपनी है, सब चीजें ठाकुरजीकी हैं, वे जहाँ रहते हैं, वहीं मौज रहती है! वे हरदम मस्तीमें रहते हैं!

सन्त बड़े विचित्र होते हैं! एक सन्तकी बात सुनी है। वे जब बाजारमें जाते और देखते कि दुकानमें बहुत बढ़िया-बढ़िया मिठाइयाँ रखीं हैं, फल रखे हैं तो वहीं खड़े हो जाते और मनसे कहते कि ठाकुरजी, भोग लगाइये। बरफी है, इमरती है, जलेबी है, लड्डू है, इनका भोग लगाइये। बस, वहीं खड़े होकर मस्तीसे भोग लगा देते। ऐसे आप जहाँ बढ़िया चीज देखो, ठाकुरजीके अर्पण कर दो कि ठाकुरजी, भोग लाइये। क्या जोर आता है इसमें? कौन मना करता है?

सब कुछ ठाकुरजीका है, तो फिर हम क्या करें? हम तो मौज करेंगे! क्योंकि अब हमारा कोई काम तो रहा नहीं। केवल ठाकुरजीका काम करते हैं, ठाकुरजीका नाम लेते हैं, ठाकुरजीका चिन्तन करते हैं, ठाकुरजीकी बात सुनते हैं। सब संसारके मालिक भगवान् हैं। मालिकके चरणोंमें मालिककी चीजें अर्पण करते हुए आपको क्या जोर आता है, बताओ? आप कहते हो कि वस्तु मेरी है, पर कितने दिनोंसे, कितने वर्षोंसे मेरी है? कितने वर्षोंतक मेरी कहते रहोगे? आखिर तो वह रहेगी ठाकुरजीकी ही। अगर जीते-जी हृदयसे ठाकुरको अर्पण कर दो तो मौज हो जायगी! कितनी सुगम और कितनी श्रेष्ठ बात है!

सन्तोंकी साखी आती है—

राम नाम की संतदास, दो अन्तर धक धूण।
या तो गुपती बात है, कहो बतावे कूण॥

कौन बताता है ऐसी बढ़िया बात? और कितनी सुगम! कितने ऊँचे दर्जेकी! कितनी निश्चिन्तताकी, निर्भयताकी, आनन्दकी बात है! न चिन्ता है, न भय है, न उद्वेग है, न जीनेकी इच्छा है, न कुछ पानेका इच्छा है। हमारी इच्छा कुछ नहीं। ठाकुरजीकी इच्छामें अपनी इच्छा मिला दी। अब ठाकुरजी जैसा चाहें, वैसा रखें।

जाहि विधि राखे राम, ताहि विधि रहिये,
सीताराम सीताराम सीताराम कहिये।

अपनी कोई माँग नहीं, कोई इच्छा नहीं। इससे आफत तो हमारी मिट जाय और भगवान् राजी हो जायँ! मेरी माननेसे चिन्ता रहती है कि कहीं नष्ट न हो जाय, कोई ले न जाय आदि। परन्तु ठाकुरजीको अर्पण कर दिया तो अब कैसी मौज है! गया तो ठाकुरजीका, रहा तो ठाकुरजीका!

[एक पुराना प्रवचन—'जीवनोपयोगी प्रवचन' पुस्तकसे]

*** *** ***

श्रोता—पहले तो भगवान्‌का भजन करनेका समय मिल जाता था, पर आजकल समय नहीं मिलता!

स्वामीजी—पहले समय मिलता था, अब नहीं मिलता, यह बात बिल्कुल नहीं है। पहले भी समय ऐसा ही था। व्यवहारमें पहले अपने सब काम ऐसे ही करते थे, अब भी करते हैं। इसमें कोई फर्क नहीं है। परन्तु भजन करनेकी भीतरसे इच्छा नहीं है, नीयत नहीं है! वास्तवमें भगवत्प्राप्तिके लिये नया काम कुछ करना ही नहीं है! जो काम आप करते हो, वही करो। निषिद्ध काम मत करो। भगवत्प्राप्तिके लिये समयकी जरूरत नहीं है। हम भगवान्‌के हैं और भगवान्‌का काम करते हैं—यह मान लो।

मैं 'पंचामृत' बताया करता हूँ। हम भगवान्‌के ही हैं, भगवान्‌के ही दरबारमें रहते हैं, भगवान्‌का ही काम करते हैं, भगवान्‌का ही प्रसाद पाते हैं और भगवान्‌के दिये प्रसादसे भगवान्‌के ही जनोंकी सेवा करते हैं—ये पाँच बातें मान लो तो आप बिल्कुल भगवान्‌का नाम मत लो, कल्याण हो जायगा! समयकी जरूरत नहीं है। अपने-आपको बदलनेके बाद समयकी जरूरत नहीं रहती। अपनेको तो संसारी मानते हैं और भगवान्‌का भजन करना चाहते हैं तो वह पूरा भजन नहीं होता। **समय लगाते हैं तो वह पूरा भजन नहीं होता! अपने-आपको लगा देते हैं कि 'मैं भगवान्‌का हूँ' तो पूरा भजन होता है।**

साधकका पूरा समय ही साधन है। मनुष्य कहो या साधक कहो, एक ही बात है। 'मनुष्य' शब्द साधकका वाचक है। साधक चौबीस घण्टे जो कुछ करता है, वह भगवान्‌का ही काम होता है। गीतामें भगवान् कहते हैं—

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥
शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः।
सन्न्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि॥

(गीता ९। २७-२८)

'हे कुन्तीपुत्र! तू जो कुछ करता है, जो कुछ भोजन करता है, जो कुछ यज्ञ करता है, जो कुछ दान देता है और जो कुछ तप करता है, वह सब मेरे अर्पण कर दे।'

'इस प्रकार मेरे अर्पण करनेसे कर्मबन्धनसे और शुभ (विहित) और अशुभ (निषिद्ध) सम्पूर्ण कर्मोंके फलोंसे तू मुक्त हो जायगा। ऐसे अपने-सहित सब कुछ मेरे अर्पण करनेवाला और सबसे सर्वथा मुक्त हुआ तू मुझे ही प्राप्त हो जायगा।'

व्यवहारमें ही परमार्थ कर देना गीताकी विशेषता है! नींद लेना, टट्टी-पेशाब फिरना, कुल्ला करना, शौच-स्नान करना, धोती-कपड़ा धोना आदि सब भगवान्‌का काम है, भगवान्‌का भजन है। आठ पहर, चौबीस घण्टेमें आधा मिनट भी भगवान्‌के कामके सिवाय हमारा कोई काम है ही नहीं! सब संसारके मालिक भगवान् हैं तो हमारे मालिक भी भगवान् हुए। अतः उनके लिये ही हम सब काम करते हैं।

'पंचामृत' की एक-एक बात कल्याण करनेवाली है। केवल भावकी जरूरत है, समयकी जरूरत नहीं। आप भाव बदल दो तो सब समय भगवान्‌का भजन हो जायगा। भजनके बिना कोई भी क्रिया बाकी नहीं रहेगी। भाव बदल दो तो दुनिया बदल जायगी—**'वासुदेवः सर्वम्'** (गीता ७। १९)! आपकी नीयत भगवत्प्राप्तिकी होनी चाहिये। भगवत्प्राप्तिके समान सरल कोई काम है ही नहीं!!

[दिनांक १०.२.२००० को सायं ४ बजे ढालेगाँवमें दिया गया प्रवचन]